चंद्रधर शर्मा गुलेरी

जन्म : **7 जुलाई, 1883 ।**
निधन : **12 सितंबर, 1922 ।**
जन्म-स्थान : **जयपुर, राजस्थान ।**
मूल निवास : **'गुलेर' नामक ग्राम, जिला - कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश ।**
पिता : **पं० शिवराम ।**
शिक्षा : **बचपन में संस्कृत की शिक्षा, 1899 में इलाहाबाद तथा कोलकाता विश्वविद्यालयों से क्रमशः एंट्रेंस तथा मैट्रिक, 1901 में कोलकाता विश्वविद्यालय से इंटरमीडिएट, 1903 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से बी० ए० ।**
वृत्ति : **1904 में जयपुर दरबार की ओर से खेतड़ी के नाबालिग राजा जयसिंह के अभिभावक बनकर मेयो कॉलेज, अजमेर में आ गए । जयपुर भवन छात्रावास के अधीक्षक। 1916 में संस्कृत विभाग के अध्यक्ष । अंतिम दिनों में मदन मोहन मालवीय के निमंत्रण पर बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में प्राच्य विभाग के कार्यवाहक प्राचार्य तथा मनींद्र चंद्र नंदी पीठ के प्रोफेसर ।**
संपादन : **समालोचक, काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका ।**
रचनाएँ : **कहानियाँ : सुखमय जीवन (1911), बुद्धू का काँटा (1911) और उसने कहा था (1915) । प्राच्यविद्या, इतिहास, पुरातत्त्व, भाषा विज्ञान और समसामयिक विषयों पर निबंध लेखन । कछुआ धरम, मारेसि मोहिं कुठाँव, पुरानी हिंदी, भारतवर्ष, डिंगल, संस्कृत की टिपरारी, देवानां प्रिय आदि प्रमुख निबंध । इनके अतिरिक्त अनुवादों की बाढ़, खोज की खाज, क्रियाहीन हिंदी, वैदिक भाषा में प्राकृतपन आदि टिप्पणियाँ भी प्रकाशित । अंग्रेजी में 'ए पोयम बाय भास, ए कमेंटरी ऑन वात्सयायंस कामसूत्र, दि लिटरेरी क्रिटिसिज्म आदि निबंध । देशप्रेम को लेकर कुछ कविताएँ भी लिखीं ।**

चंद्रधर शर्मा गुलेरी बीसवीं शती के प्रथम चरण में हिंदी गद्य साहित्य के एक प्रमुख लेखक थे । वे अपने समय में हिंदी, संस्कृत, अंग्रेजी आदि भाषाओं के प्रकांड विद्वान थे । प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं में भी उनकी गहरी गति थी । पुरातत्त्व, इतिहास, भाषाशास्त्र आदि विषयों का उनका ज्ञान अपने समय में अद्यतन और तलस्पर्शी माना जाता था । साहित्य के अतिरिक्त अपनी अभिरुचि के अन्य विषयों पर उन्होंने हिंदी में निबंध, लेख, टिप्पणियाँ बराबर लिखीं । वे द्विवेदी युग के एक प्रमुख निबंधकार और बहुमान्य विद्वान थे । गूढ़ और विदग्ध हास-परिहास तथा व्यंग्य से परिपूर्ण अपनी कलात्मक भाषा-शैली को देखते हुए वे अपने समय से बहुत आगे दिखाई पड़ते हैं । वस्तुतः वे अपने युग के अत्यंत प्रतिभाशाली और समर्थ लेखक थे ।

गुलेरी जी ने कुल तीन ही कहानियाँ लिखीं और उन्हीं के बल पर कहानीकार के रूप में हिंदी में अमर हो गए । उनकी कहानियाँ विषयवस्तु, भाषा-शैली और शिल्प के कारण अपने समय से बहुत आगे की रचनाएँ प्रतीत होती

हैं और हिंदी कहानी के विकास में इनका प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से प्रभाव पड़ा है। संस्कृत का इतना बड़ा पंडित और शास्त्र निष्णात, गंभीर प्रकृति का विद्वान ऐसी सर्जनात्मक भाषा-शैली में, कल्पना और यथार्थ के ऐसे संतुलित संधान के साथ, आधुनिक कथ्यों वाली ये कहानियाँ लिख सका; यह सचमुच चमत्कृत कर देने वाली, आश्चर्य से भर देने वाली रचनात्मक घटना है। ये कहानियाँ अपनी भाषा-शैली और शिल्प को लेकर आज भी उतनी ही तरोताजा और रचनात्मक कौतुक-सरीखी प्रतीत होती हैं। कौतुक का अभिप्राय कतई यह नहीं कि इनकी विषयवस्तु या कथ्य कम महत्त्वपूर्ण अथवा अगंभीर हैं। सचाई इसके विपरीत है। इनकी विषयवस्तु और कथ्य अधिक गंभीर, महत्त्वपूर्ण तथा समय से आगे के हैं।

यहाँ प्रस्तुत कहानी 'उसने कहा था' उनकी अमर रचना है। यह हिंदी कहानी के विकास में 'मील का पत्थर' मानी जाती है। यह एक कालजयी रचना है। प्रसिद्ध फिल्मकार विमल राय ने इस कहानी पर फिल्म भी बनाई थी और इसके अनेक नाट्य रूपांतर हो चुके हैं। शुद्ध प्रेम की आध्यात्मिक अनुभूति और उसकी स्वाभाविक उत्सर्गमय अभिव्यक्ति इस कहानी का कथ्य है। कहानी अमृतसर के भीड़ भरे बाजार में शुरू होती है जहाँ बारह वर्ष का लड़का (लहना सिंह) आठ वर्ष की एक लड़की को ताँगे के नीचे आने से बचाता है। लड़का लड़की को यह पूछते हुए छेड़ता है : "तेरी कुड़माई (मँगनी) हो गई ?" लड़की 'धत्' कहकर भाग जाती है। एक दिन वह 'धत्' कहकर भागने की बजाय कहती है "हाँ, कल हो गई। देखते नहीं, यह रेशम के फूलों वाला सालू ?" लहना सिंह हतप्रभ रह जाता है। इसके बाद लहना सिंह से भेंट प्रथम विश्वयुद्ध के मोर्चे पर होती है। वह याद करता है कि छुट्टी के बाद घर से लाम पर जाते समय वह सूबेदार हजारा सिंह के घर गया था। वहाँ सूबेदारनी ने उसे एकांत में बुलाकर कहा था कि मेरे पति और बेटे (बोधा) का ख्याल रखना। यह सूबेदारनी बचपन में अमृतसर में मिली वही लड़की थी। लहना सिंह सूबेदारनी के प्यार की उस किरण को दुनिया से बचाकर अपने हृदय में सँजोए रहा और युद्ध में अपने प्राणों की बलि देकर भी हजारा सिंह और बोधा की रक्षा की। कहानी की घटनाओं में स्वाभाविक नाटकीयता है जो मन पर अपने उत्कर्ष की ओर संचरण करती हुई गतिशीलता के कारण जबर्दस्त असर डालती है। इस तरह प्रभावान्विति जो कहानी का प्राण मानी जाती है, उसका अद्भुत रचाव है। वातावरण की सृष्टि करने में लेखक को अपूर्व सफलता प्राप्त हुई। आरंभ से ही एक कुतूहल पाठक को अपने प्रभाव में बाँध लेता है और कहानी को उत्कर्ष बिंदु पर पहुँचाकर ही विराम लेता है। किंतु तब कहानी का प्रभाव मन में गूँजता रह जाता है।

◆ ◆ ◆

> **"उसने कहा था में पक्के यथार्थवाद के बीच, सुरुचि की चरम मर्यादा के भीतर, भावुकता का चरम उत्कर्ष अत्यंत निपुणता के साथ संपुटित है। घटना इसकी ऐसी है जैसी बराबर हुआ करती है, पर उसमें भीतर से प्रेम का एक स्वर्गीय स्वरूप झाँक रहा है- केवल झाँक रहा है। निर्लज्जता के साथ पुकार या कराह नहीं रहा है। कहानी भर में कहीं प्रेमी की निर्लज्जता, प्रगल्भता, वेदना की वीभत्स विवृति नहीं है। सुरुचि के सुकुमार स्वरूप पर कहीं आघात नहीं पहुँचता। इसकी घटनाएँ ही बोल रही हैं, पात्रों के बोलने की अपेक्षा नहीं।"**
>
> **-रामचंद्र शुक्ल**

उसने कहा था

बड़े-बड़े शहरों के इक्के-गाड़ीवालों की जबान के कोड़ों से जिनकी पीठ छिल गई है और कान पक गए हैं, उनसे हमारी प्रार्थना है कि अमृतसर के बंबूकार्टवालों की बोली का मरहम लगावें । जब बड़े-बड़े शहरों की चौड़ी सड़कों पर घोड़े की पीठ को चाबुक से धुनते हुए इक्केवाले कभी घोड़े की नानी से अपना निकट संबंध स्थिर करते हैं, कभी राह चलते पैदलों की आँखों के न होने पर तरस खाते हैं, कभी उनके पैरों की अँगुलियों के पोरों को चींथकर अपने ही को सताया हुआ बताते हैं और संसार भर की ग्लानि, निराशा और क्षोभ के अवतार बने नाक की सीध चले जाते हैं, तब अमृतसर में उनकी बिरादरीवाले तंग चक्करदार गलियों में, हर एक लड्ढीवाले के लिए ठहरकर सब्र का समुद्र उमड़ाकर 'बचो खालसाजी' 'हटो भाईजी' 'ठहरना भाई' 'आने दो लालाजी' 'हटो बाछा' करते हुए सफेद फेटों, खच्चरों और बतकों, गन्ने और खोमचे और भारेवालों के जंगल में राह खेते हैं । क्या मजाल है कि जी और साहब बिना सुने किसी को हटना पड़े । यह बात नहीं कि उनकी जीभ चलती ही नहीं; चलती है, पर मीठी छुरी की तरह महीन मार करती है । यदि कोई बुढ़िया बार-बार चितौनी देने पर भी लीक से नहीं हटती, तो उनकी वचनावली के ये नमूने हैं - 'हट जा, जीणे जोगिए; हट जा, करमा वालिए; हट जा, पुत्ताँ प्यारिए; बच जा, लंबी वालिए ।' समष्टि में इसका अर्थ है कि तू जीने योग्य है, तू भाग्योंवाली है, पुत्रों को प्यारी है, लंबी उमर तेरे सामने है, तू क्यों मेरे पहियों के नीचे आना चाहती है ? -बच जा ।

ऐसे बंबूकार्टवालों के बीच में होकर एक लड़का और एक लड़की चौक की एक दूकान पर आ मिले । उसके बालों और इसके ढीले सुथने से जान पड़ता था कि दोनों सिख हैं । वह अपने मामा के केश धोने के लिए दही लेने आया था और यह रसोई के लिए बड़ियाँ । दूकानदार एक परदेशी से गुथ रहा था, जो सेर भर गीले पापड़ों की गड्डी को गिने बिना हटता न था ।

"तेरे घर कहाँ है ?"

"मगरे में – और तेरे !"

"माँझे में ; यहाँ कहाँ रहती है ?"

"अतरसिंह की बैठक में, वे मेरे मामा होते हैं ।"

"मैं भी मामा के यहाँ हूँ, उनका घर गुरुबाजार में है ।"

इतने में दूकानदार निबटा और इनका सौदे देने लगा । सौदा लेकर दोनों साथ-साथ चले । कुछ

दूर जाकर लड़के ने मुसकुराकर पूछा –

"तेरी कुड़माई हो गई ?" इस पर लड़की कुछ आँखें चढ़ाकर 'धत्' कहकर दौड़ गई और लड़का मुँह देखता रह गया ।

दूसरे-तीसरे दिन सब्जीवाले के यहाँ, दूधवाले के यहाँ, अकस्मात् दोनों मिल जाते । महीना भर यही हाल रहा । दो-तीन बार लड़के ने फिर पूछा, "तेरी कुड़माई हो गई ?" और उत्तर में वही 'धत्' मिला । एक दिन जब फिर लड़के ने वैसे ही हँसी में चिढ़ाने के लिए पूछा तब लड़की, लड़के की संभावना के विरुद्ध बोली – "हाँ हो गई ।"

"कब ?"

"कल – देखते नहीं यह रेशम से कढ़ा हुआ सालू !" लड़की भाग गई । लड़के ने घर की राह ली । रास्ते में एक लड़के को मोरी में ढकेल दिया, एक छाबड़ीवाले की दिन भर की कमाई खोई, एक कुत्ते को पत्थर मारा और एक गोभीवाले के ठेले में दूध उड़ेल दिया । सामने नहाकर आती हुई किसी वैष्णवी से टकराकर अंधे की उपाधि पाई । तब कहीं घर पहुँचा ।

(2)

"राम राम, यह भी कोई लड़ाई है ! दिन-रात खंदकों में बैठे हड्डियाँ अकड़ गईं । लुधियाने से दस गुना जाड़ा, और मेंह और बरफ ऊपर से । पिंडलियों तक कीच में धँसे हुए हैं । गनीम कहीं दिखता ही नहीं–घंटे दो घंटे में कान के परदे फाड़ने वाले धमाके के साथ सारी खंदक हिल जाती है और सौ-सौ गज धरती उछल पड़ती है ! इस गैबी गोले से बचे तो कोई लड़े । नगरकोट का जलजला सुना था, यहाँ दिन में पचीस जलजले होते हैं । जो कहीं खंदक से बाहर साफा या कुहनी निकल गई तो चटाक से गोली लगती है । न मालूम बेईमान मिट्टी में लेटे हुए हैं या घास की पत्तियों में छिपे रहते हैं ।"

"लहनासिंह, और तीन दिन हैं । चार तो खंदक में बिता ही दिए । परसों 'रिलीफ' आ जाएगी और फिर सात दिन की छुट्टी । अपने हाथों झटका करेंगे और पेट भर खाकर सो रहेंगे । उसी फिरंगी मेम के बाग में–मखमल की सी हरी घास है । फल और दूध की वर्षा कर देती है । लाख कहते हैं, दाम नहीं लेती । कहती है, तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आए हो ।"

"चार दिन तक पलक नहीं झँपी । बिना फेरे घोड़ा बिगड़ता है और बिना लड़े सिपाही । मुझे तो संगीन चढ़ाकर मार्च का हुक्म मिल जाए फिर सात जर्मनों को अकेला मारकर न लौटूँ तो मुझे दरबार साहब की देहली पर मत्था टेकना नसीब न हो । पाजी कहीं के, कलों के घोड़े संगीन देखते ही मुँह फाड़ देते हैं और पैर पकड़ने लगते हैं । यों अँधेरे में तीस-तीस मन का गोला फेंकते हैं । उस दिन धावा किया था–चार मील तक एक जर्मन नहीं छोड़ा था ! पीछे जनरल ने हट आने का कमान दिया, नहीं तो–"

"नहीं तो सीधे बर्लिन पहुँच जाते ! क्यों ?" सूबेदार हजारासिंह ने मुसकुराकर कहा, "लड़ाई के मामले जमादार या नायक के चलाए नहीं चलते । बड़े अफसर दूर की सोचते हैं । तीन सौ मील का सामना है । एक तरफ बढ़ गए तो क्या होगा ?"

"सूबेदारजी, सच है," लहनासिंह बोला, "पर करें क्या ? हड्डियों में तो जाड़ा धँस गया है । सूर्य

निकलता नहीं और खाई में दोनों तरफ़ से चंबे की बावलियों के-से सोते झड़ रहे हैं । एक धावा हो जाए तो गरमी आ जाए ।''

''उदमी, उठ, सिगड़ी में कोले डाल । वजीरा, तुम चार जन बाल्टियाँ लेकर खाई का पानी बाहर फेंको । महासिंह, शाम हो गई है, खाई के दरवाजे का पहरा बदल दे ।'' यह कहते हुए सूबेदार सारी खंदक में चक्कर लगाने लगे ।

वजीरासिंह पलटन का विदूषक था । बाल्टी में गँदला पानी लेकर खाई के बाहर फेंकता हुआ बोला–''मैं पाधा बन गया हूँ । करो जर्मनी के बादशाह का तर्पण !'' इस पर सब खिलखिला पड़े और उदासी के बादल फट गए ।

लहनासिंह ने दूसरी बाल्टी भर उसके हाथ में देकर कहा–''अपनी बाड़ी के खरबूजों में पानी दो । ऐसा खाद-पानी पंजाब भर में नहीं मिलेगा !''

''हाँ, देश क्या है, स्वर्ग है ! मैं तो लड़ाई के बाद सरकार से दस घुमा जमीन यहाँ माँग लूँगा और फलों के बूटे लगाऊँगा ।''

''लाड़ीहोराँ को भी यहाँ बुला लोगे ? या वही दूध पिलानेवाली फिरंगी मेम –''

''चुप कर । यहाँ वालों को शरम नहीं ।''

''देस-देस की चाल है । आज तक मैं उसे समझा न सका कि सिख तमाकू नहीं पीते । वह सिगरेट देने में हठ करती है, ओठों में लगाना चाहती है, और मैं पीछे हटता हूँ तो समझती है कि राजा बुरा मान गया, अब मेरे मुल्क के लिए लड़ेगा नहीं ।''

''अच्छा अब बोधासिंह कैसा है ?''

''अच्छा है ।''

''जैसे मैं जानता ही न होऊँ । रात भर तुम अपने दोनों कंबल उसे उढ़ाते हो और आप सिगड़ी के सहारे गुजर करते हो ! उसके पहरे पर आप पहरा दे आते हो । अपने सूखे लकड़ी के तख्तों पर उसे सुलाते हो और आप कीचड़ में पड़े रहते हो । कहीं तुम न माँदे पड़ जाना । जाड़ा क्या है, मौत है और 'निमोनिया' से मरनेवालों को मुरब्बे नहीं मिला करते ।''

''मेरा डर मत करो । मैं तो बुलेल की खड्ड के किनारे मरूँगा । भाई कीरतसिंह की गोदी पर मेरा सिर होगा और मेरे हाथ के लगाए हुए आँगन के आम के पेड़ की छाया होगी ।''

वजीरासिंह ने त्यौरी चढ़ाकर कहा–''क्या मरने-मरने की लगाई है ! मरे जर्मनी और तुरक ! हाँ भाइयो, कुछ गाओ । हाँ कैसे –

''दिल्ली शहर ते पिशौर नूँ जाँदिए,
कर लेणा लौंगाँ दा व्यौपार मंडिए;
कर लेणा नाड़ेदा सौदा अड़िए–
(ओय) लाणा चटाका क़दुए नूँ ।

कद्दू वण्याए मजेदार गोरिए,

हुण लागा चटाका कदुए नूँ ।।''

('ऐ दिल्ली शहर से पेशावर को जाने वाली ! मंडी में लौंगों का व्यापार कर लेना । अरी ! नाड़े का सौदा भी कर लेना । ओय अब हमें कद्दू चखना है । ऐ गोरे वर्णवाली ! कद्दू अत्यंत स्वादिष्ट पका है ! अब हमें कद्दू चखना है ।)

कौन जानता था कि दाढ़ियों वाले, घरबारी सिख ऐसा लुच्चे का गीत गाएँगे, पर सारी खंदक गीत से गूँज उठी और सिपाही फिर ताजे हो गए, मानो चार दिन से सोते और मौज ही करते रहे हों ।

(3)

दो पहर रात गई है । अँधेरा है । सन्नाटा हुआ है । बोधासिंह खाली बिस्किटों के तीन टिनों पर अपने दोनों कंबल बिछाकर लहनासिंह के दो कंबल और एक बरानकोट ओढ़ कर सो रहा है । लहनासिंह पहरे पर खड़ा हुआ है । एक आँख खाई के मुँह पर है और एक बोधासिंह के दुबले शरीर पर । बोधासिंह कराहा ।

''क्यों बोधा भाई, क्या है ?''

''पानी पिला दो ।''

लहनासिंह ने कटोरा उसके मुँह से लगाकर पूछा–''कहो, कैसे हो ?'' पानी पीकर बोधा बोला–''कँपनी छूट रही है । रोम-रोम में तार दौड़ रहे हैं । दाँत बज रहे हैं ।''

''अच्छा, मेरी जरसी पहन लो ।''

''और तुम ?''

''मेरे पास सिगड़ी है और मुझे गर्मी लगती है । पसीना आ रहा है ।''

''ना, मैं नहीं पहनता; चार दिन से तुम मेरे लिए–''

''हाँ, याद आई । मेरे पास दूसरी गरम जरसी है । आज सबेरे ही आई है । विलायत से मेमें बुन-बुनकर भेज रही हैं । गुरु उनका भला करें ।'' यों कहकर लहना अपना कोट उतारकर जरसी उतारने लगा ।

''सच कहते हो ?''

''और नहीं झूठ ?'' यों कहकर नाही करते बोधा को उसने जबरदस्ती जरसी पहना दी और आप खाकी कोट जीन का कुरता भर पहनकर पहरे पर आ खड़ा हुआ । मेम की जरसी की कथा केवल कथा थी ।

आधा घंटा बीता । इतने में खाई के मुँह से आवाज आई –''सूबेदार हजारासिंह !''

''कौन लपटन साहब ? हुकुम हुजूर,'' कहकर सूबेदार तनकर फौजी सलाम करके सामने हुआ ।

''देखो, इसी दम धावा करना होगा । मील भर की दूरी पर पूरब के कोने में एक जर्मन खाई है ।

उसमें पचास से जियादह जर्मन नहीं हैं । इन पेड़ों के नीचे-नीचे दो खेत काटकर रास्ता है । तीन-चार घुमाव हैं । जहाँ मोड़ है वहाँ पंद्रह जवान खड़े कर आया हूँ । तुम यहाँ दस आदमी छोड़कर सब को साथ ले उनसे जा मिलो । खंदक छीनकर वहीं, जब तक दूसरा हुक्म न मिले, डटे रहो । हम यहाँ रहेगा ।''

'' जो हुक्म ।''

चुपचाप सब तैयार हो गए । बोधा भी कंबल उतारकर चलने लगा । तब लहनासिंह ने उसे रोका । लहनासिंह आगे हुआ, तो बोधा के बाप सूबेदार ने उँगली से बोधा की ओर इशारा किया । लहनासिंह समझकर चुप हो गया । पीछे दस आदमी कौन रहें, इस पर बड़ी हुज्जत हुई । कोई रहना न चाहता था । समझा-बुझाकर सूबेदार ने मार्च किया । लपटन साहब लहना की सिगड़ी के पास मुँह फेरकर खड़े हो गए और जेब से सिगरेट निकालकर सुलगाने लगे । दस मिनट बाद उन्होंने लहना की ओर हाथ बढ़ाकर कहा–

''लो तुम भी पियो ।''

आँख मारते-मारते लहनासिंह सब समझ गया । मुँह का भाव छिपाकर बोला–''लाओ, साहब ।'' हाथ आगे करते ही उसने सिगड़ी के उजाले में साहब का मुँह देखा । बाल देखे । तब उसका माथा ठनका । लपटन साहब के पट्टियोंवाले बाल एक दिन में कहाँ उड़ गए और उनकी जगह कैदियों के-से कटे हुए बाल कहाँ से आ गए ?

शायद साहब शराब पिए हुए हैं और उन्हें बाल कटाने का मौका मिल गया है ! लहनासिंह ने जाँचना चाहा । लपटन साहब पाँच वर्ष से उसकी रेजिमेंट में थे ।

'क्यों साहब, हमलोग हिंदुस्तान कब जाएँगे ?''

''लड़ाई खत्म होने पर । क्यों, क्या यह देश पसंद नहीं ?''

''नहीं साहब, शिकार के वे मजे यहाँ कहाँ ? याद है, पारसाल नकली लड़ाई के पीछे हम-आप जगाधरी जिले में शिकार करने गए थे ।...हाँ, हाँ–वहीं जब आप खोते पर सवार थे और आपका खानसामा अब्दुल्ला रास्ते के एक मंदिर में जल चढ़ाने को रह गया धा । ...बेशक, पाजी कहीं का । ...सामने से वह नीलगाय निकली कि ऐसी बड़ी मैंने कभी न देखी थी । और आपकी एक गोली कंधे में लगी और पुट्ठे में निकली । ऐसे अफसर के साथ शिकार खेलने में मजा है । क्यों साहब, शिमले से तैयार होकर उस नीलगाय का सिर आ गया था न ? आपने कहा था कि रेजिमेंट की मैस में लगाएँगे ।

''हाँ, पर मैंने वह विलायत भेज दिया ।''

''ऐसे बड़े-बड़े सींग ! दो-दो फुट के तो होंगे !''

''हाँ, लहनासिंह, दो फुट चार इंच के थे । तुमने सिगरेट नहीं पिया ?''

'पीता हूँ साहब, दियासलाई ले आता हूँ ।' – कहकर लहनासिंह खंदक में घुसा । अब उसे संदेह नहीं रहा था और उसने झटपट निश्चय कर लिया कि क्या करना चाहिए ।

अँधेरे में किसी सोने वाले से वह टकराया ।

''कौन ? वजीरासिंह ?''

"हाँ, क्यों लहना ? क्या कयामत आ गई ? जरा तो आँख लगने दी होती ?"

(4)

"होश में आओ । कयामत आई है और लपटन साहब की वर्दी पहनकर आई है ।"

"क्या ?"

लपटन साहब या तो मारे गए हैं या कैद हो गए हैं । उनकी वर्दी पहनकर यह कोई जर्मन आया है । सूबेदार ने इसका मुँह नहीं देखा । मैंने देखा और बातें की हैं । सौहरा साफ उर्दू बोलता है, पर किताबी उर्दू । और मुझे पीने को सिगरेट दिया है ।"

"तो अब ?"

"अब मारे गए । धोखा है । सूबेदार कीचड़ में चक्कर काटते फिरेंगे और यहाँ खाई पर धावा होगा । उधर उन पर खुले में धावा होगा । उठो, एक काम करो । पलटन के पैरों के निशान देखते-देखते दौड़ जाओ । अभी बहुत दूर न गए होंगे । सूबेदार से कहो कि एकदम लौट आएँ ! खंदक की बात झूठ है । चले जाओ, खंदक के पीछे से निकल जाओ । पत्ता तक न खड़के । देर मत करो ।"

"हुकुम तो यह है कि यहीं–"

"ऐसी-तैसी हुकुम की ! मेरा हुकुम–जमादार लहनासिंह जो इस वक्त यहाँ सबसे बड़ा अफसर है, उसका हुकुम है । मैं लपटन साहब की खबर लेता हूँ ।"

"पर यहाँ तो तुम आठ ही हो !"

"आठ नहीं, दस लाख । एक-एक अकालिया सिख सवा लाख के बराबर होता है ! चले जाओ ।"

लौटकर खाई के मुहाने पर लहनासिंह दीवार से चिपक गया । उसने देखा कि लपटन साहब ने जेब से बेल के बराबर तीन गोले निकाले । तीनों को जगह-जगह खंदक की दीवारों में घुसेड़ दिया और तीनों में एक तार सा बाँध दिया । तार के आगे सूत की एक गुत्थी थी जिसे सिगड़ी के पास रखा । बाहर की तरफ कर एक दियासलाई जलाकर गुत्थी पर रखने...

बिजली की तरह दोनों हाथों से उलटी बंदूक को उठाकर लहनासिंह ने साहब की कुहनी पर तानकर दे मारा । धमाके के साथ साहब के हाथ से दियासलाई गिर पड़ी । लहनासिंह ने एक कुंदा साहब की गर्दन पर मारा और साहब आँख ! मीन गौट्ट (ओ ! माइ गॉड) कहते हुए चित हो गए । लहनासिंह ने तीनों गोले बीनकर खंदक के बाहर फेंके और साहब को घसीट कर सिगड़ी के पास लिटाया । जेबों की तलाशी ली । तीन-चार लिफाफे और एक डायरी निकाल कर उन्हें अपनी जेब के हवाले किया ।

साहब की मूर्च्छा हटी । लहनासिंह हँसकर बोला –"क्यों लपटन साहब ! मिजाज कैसा है ? आज मैंने बहुत बातें सीखीं । यह सीखा कि सिख सिगरेट पीते हैं । यह सीखा कि जगाधरी के जिले में नील गायें होती हैं और उनके दो फुट चार इंच के सींग होते हैं । यह सीखा कि मुसलमान खानसामा मूर्तियों पर जल चढ़ाते हैं और लपटन साहब खोते पर चढ़ते हैं । पर यह तो कहो, ऐसी साफ उर्दू कहाँ से सीख आए ? हमारे लपटन साहब तो बिना 'डैम' के पाँच लफ्ज भी नहीं बोला करते थे ।"

लहना ने पतलून की जेबों की तलाशी नहीं ली थी । साहब ने मानो जाड़े से बचाने के लिए दोनों हाथ जेबों में डाले ।

लहनासिंह कहता गया –"चालाक तो बड़े हो, पर माँझे का लहना इतने बरस लपटन साहब के साथ रहा है । उसे चकमा देने के लिए चार आँखें चाहिए । तीन महीने हुए, एक तुरकी मौलवी मेरे गाँव में आया था । औरतों को बच्चे होने की ताबीज बाँटता था और बच्चों को दवाई देता था । चौधरी के बड़ के नीचे मंजा बिछाकर हुक्का पीता रहता था और कहता था जर्मनीवाले बड़े पंडित हैं । वेद पढ़-पढ़कर उसमें से विमान चलाने की विद्या जान गए हैं । गौ को नहीं मारते । हिंदुस्तान में आ जाएँगे तो गौ-हत्या बंद कर देंगे । मंडी के बनियों को बहकाता था कि डाकखाने से रुपए निकाल लो, सरकार का राज्य जाने वाला है । डाक बाबू पोल्हूराम भी डर गया था । मैंने मुल्लाजी की दाढ़ी मूँड़ दी थी और गाँव से बाहर निकालकर कहा था जो मेरे गाँव में अब पैर रखा तो–"

साहब की जेब में से पिस्तौल चला और लहना की जाँघ में गोली लगी । इधर लहना की हैनरी-मार्टिनी के दो फायरों ने साहब की कपाल क्रिया कर दी । धड़ाका सुनकर सब दौड़ आए ।

बोधा चिल्लाया–"क्या है ?"

लहनासिंह ने उसे तो यह कहकर सुला दिया कि "एक हड़का हुआ कुत्ता आया था, मार दिया" और औरों से सब हाल कह दिया । सब बंदूकें लेकर तैयार हो गए । लहना ने साफा फाड़कर घाव की दोनों तरफ पट्टियाँ कसकर बाँधी । घाव मांस में ही था । पट्टियों के कसने से लहू निकलना बंद हो गया ।

उतने में सत्तर जर्मन चिल्लाकर खाई में घुस पड़े । सिखों की बंदूकों की बाढ़ ने पहले धावे को रोका । दूसरे को रोका । पर यहाँ थे आठ (लहना सिंह तक-तककर मार रहा था–वह खड़ा था, और लेटे हुए थे) और वे सत्तर । अपने मुर्दा भाइयों के शरीर पर चढ़कर जर्मन आगे घुसे आते थे । थोड़े से मिनटों में वे...

अचानक आवाज आई–'वाह गुरुजी की फतह ! वाह गुरुजी का खालसा !' और धड़ाधड़ बंदूकों के फायर जर्मनों की पीठ पर पड़ने लगे । ऐन मौके पर जर्मन दो चक्की के पाटों के बीच में आ गए । पीछे से सूबेदार हजारासिंह के जवान आग बरसाते थे । और सामने लहनासिंह के साथियों के संगीन चल रहे थे । पास आने पर पीछेवालों ने भी संगीन पिरोना शुरू कर दिया ।

एक किलकारी और–"अकाल सिक्खाँ दी फौज आई । वाह गुरुजी दी फतह ! वाह गुरुजी दा खालसा !! सत् सिरी अकाल पुरुष !!!" और लड़ाई खतम हो गई । तिरसठ जर्मन या तो खेत रहे या कराह रहे थे । सिखों में पंद्रह के प्राण गए । सूबेदार के दाहिने कंधे में से गोली आर-पार निकल गई । लहनासिंह की पसली में एक गोली लगी । उसने घाव को खंदक की गीली मिट्टी से पूर लिया और बाकी का साफा कसकर कमरबंद की तरह लपेट लिया । किसी को खबर न हुई कि लहना के दूसरा घाव–भारी घाव लगा है ।

लड़ाई के समय चाँद निकल आया था । ऐसा चाँद, जिसके प्रकाश से संस्कृत कवियों का दिया हुआ 'क्षयी' नाम सार्थक होता है । और हवा ऐसी चल रही थी जैसी कि बाणभट्ट की भाषा में

'दंतवीणोपदेशाचार्य' कहलाती । वजीरासिंह कह रहा था कि कैसे मन-मन भर फ्राँस की भूमि मेरे बूटों से चिपक रही थी जब मैं दौड़ा-दौड़ा सूबेदार के पीछे गया था । सूबेदार लहनासिंह से सारा हाल सुन और कागजात पाकर, उसकी तुरंत-बुद्धि को सराह रहे थे और कह रहे थे कि तू न होता तो आज सब मारे जाते ।

इस लड़ाई की आवाज तीन मील दाहिनी ओर की खाईवालों ने सुन ली थी । उन्होंने पीछे से टेलीफोन कर दिया था । वहाँ से झटपट दो डॉक्टर और दो बीमार ढोने की गाड़ियाँ चलीं, जो कोई डेढ़ घंटे के अंदर आ पहुँचीं । फील्ड अस्पताल नजदीक था । सुबह होते-होते वहाँ पहुँच जाएँगे, इसलिए मामूली पट्टी बाँधकर एक गाड़ी में घायल लिटाए गए और दूसरी में लाशें रखी गईं । सूबेदार ने लहनासिंह की जाँघ में पट्टी बँधवानी चाही । पर उसने यह कहकर टाल दिया कि थोड़ा घाव है, सबेरे देखा जाएगा । बोधासिंह ज्वर में बर्रा रहा था । वह गाड़ी में लिटाया गया । लहना को छोड़कर सूबेदार जाते नहीं थे । यह देख लहना ने कहा-"तुम्हें बोधा की कसम है और सूबेदारनी की सौगंध जो इस गाड़ी में न चले जाओ ।"

"और तुम ?"

"मेरे लिए वहाँ पहुँचकर गाड़ी भेज देना । और जर्मन मुरदों के लिए भी तो गाड़ियाँ आती होंगी । मेरा हाल बुरा नहीं है । देखते नहीं मैं खड़ा हूँ ? वजीरासिंह मेरे पास है ही ।"

"अच्छा पर..."

"बोधा गाड़ी पर लेट गया ? भला । आप भी चढ़ जाओ । सुनिए तो, सूबेदारनी होराँ को चिट्ठी लिखो तो मेरा मत्था टेकना लिख देना । और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उन्होंने कहा था, वह मैंने कर दिया ।"

गाड़ियाँ चल पड़ी थीं । सूबेदार ने चढ़ते-चढ़ते लहना का हाथ पकड़कर कहा-"तूने मेरे और बोधा के प्राण बचाए हैं । लिखना कैसा ? साथ ही घर चलेंगे । अपनी सूबेदारनी को तू ही कह देना । उसने क्या कहा था ?"

"अब आप गाड़ी पर चढ़ जाओ । मैंने जो कहा है वह लिख देना और कह भी देना ।"

गाड़ी के जाते ही लहना लेट गया । "वजीरा पानी पिला दे और मेरा कमरबंद खोल दे । तर हो रहा है ।

(5)

मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ हो जाती है । जन्म भर की घटनाएँ एक-एक करके सामने आती हैं । सारे दृश्यों के रंग साफ होते हैं, समय की धुंध बिलकुल उन पर से हट जाती है !

लहनासिंह बारह वर्ष का है । अमृतसर में मामा के यहाँ आया हुआ है । दहीवाले के यहाँ सब्जीवाले के यहाँ, हर कहीं उसे एक आठ वर्ष की लड़की मिल जाती है । जब वह पूछता है तेरी कुड़माई हो गई ? तब 'धत्' कहकर वह भाग जाती है । एक दिन उसने वैसे ही पूछा तो उसने कहा-"हाँ, कल हो गई, देखते नहीं, यह रेशम के फूलोंवाला सालू ?" सुनते ही लहनासिंह को दुख हुआ । क्रोध हुआ । क्यों हुआ ?

"वजीरासिंह, पानी पिला दे ।"

पच्चीस वर्ष बीत गए । अब लहनासिंह नं० 77 राइफल्स में जमादार हो गया है । उस आठ वर्ष की कन्या का ध्यान ही न रहा । न मालूम वह कभी मिली थी या नहीं । सात दिन की छुट्टी लेकर जमीन के मुकदमें की पैरवी करने वह अपने घर गया । वहाँ रेजिमेंट के अफसर की चिट्ठी मिली कि फौज लाम पर जाती है । फौरन चले आओ । साथ ही सूबेदार हजारासिंह की चिट्ठी मिली कि मैं और बोधासिंह भी लाम पर जाते हैं, लौटते समय हमारे घर होते जाना । साथ चलेंगे । सूबेदार का गाँव रास्ते में पड़ता था और सूबेदार उसे बहुत चाहता था । लहनासिंह सूबेदार के यहाँ पहुँचा ।

जब चलने लगे तब सूबेदार बेड़े में से निकलकर आया । बोला–"लहना, सूबेदारनी तुमको जानती है । बुलाती है । जा मिल आ ।" लहनासिंह भीतर पहुँचा । सूबेदारनी मुझे जानती है ? कब से ? रेजिमेंट के क्वार्टरों में तो कभी सूबेदार के घर के लोग रहे नहीं । दरवाजे पर जाकर 'मत्था टेकना' कहा । असीस सुनी । लहनासिंह चुप ।

"मुझे पहचाना ?"

"नहीं"

"तेरी कुड़माई हो गई ? 'धत्'–कल हो गई–देखते नहीं रेशमी बूटोंवाला सालू–अमृतसर में–"

भावों की टकराहट से मूर्च्छा खुली । करवट बदली । पसली का घाव बह निकला ।

"वजीरा पानी पिला !"–उसने कहा था ।

स्वप्न चल रहा है । सूबेदारनी कह रही है–"मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया । एक काम कहती हूँ । मेरे तो भाग फूट गए । सरकार ने बहादुरी का खिताब दिया है, लायलपुर में जमीन दी है, आज नमकहलाली का मौका आया है । पर सरकार ने हम तीमियों की घघरिया पलटन क्यों न बना दी, जो मैं भी सूबेदारजी के साथ चली जाती ? एक बेटा है । फौज में भरती हुए उसे एक ही वर्ष हुआ । उसके पीछे चार और हुए, पर एक भी नहीं जिया ।" सूबेदारनी रोने लगी–"अब दोनों जाते हैं । मेरे भाग ! तुम्हें याद है एक दिन टाँगेवाले का घोड़ा दहीवाले की दूकान के पास बिगड़ गया था । तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाए थे । आप घोड़े की लातों में चले गए थे और मुझे उठाकर दूकान के तख्ते पर खड़ा कर दिया था । ऐसे ही इन दोनों को बचाना । यह मेरी भिक्षा है । तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ ।"

रोती-रोती सूबेदारनी ओबरी में चली गई । लहना भी आँसू पोछता हुआ बाहर आया ।

"वजीरासिंह पानी पिला !" – उसने कहा था ।

X X X

लहना का सिर अपनी गोद में रखे वजीरासिंह बैठा है । जब माँगता है, तब पानी पिला देता है । आध घंटे तक लहना चुप रहा, फिर बोला–

"कौन कीरत सिंह ?"

वजीरा ने कुछ समझकर कहा–"हाँ ।"

"भईया, मुझे और ऊँचा कर ले । अपने पट्ट पर मेरा सिर रख ले ।"

वजीरा ने वैसा ही किया ।

"हाँ, अब ठीक है । पानी पिला दे । बस, अब के हाड़ में यह आम खूब फलेगा । चाचा–भतीजा दोनों यहीं बैठ कर आम खाना । जितना बड़ा तेरा भतीजा है उतना ही यह आम है । जिस महीने उसका जन्म हुआ था उसी महीने मैंने इसे लगाया था ।"

वजीरासिंह के आँसू टप्टप् टपक रहे थे ।

X X X

कुछ दिन पीछे लोगों ने अखबारों में पढ़ा–

फ्राँस और बेल्जियम–68वीं सूची–मैदान में घावों से मरा–नं० 77 सिख राइफल्स जमादार लहनासिंह ।

❑❑❑

अभ्यास

पाठ के साथ

1. 'उसने कहा था' कहानी कितने भागों में बँटी हुई है ? कहानी के कितने भागों में युद्ध का वर्णन है ?
2. कहानी के पात्रों की एक सूची तैयार करें ।
3. लहनासिंह का परिचय अपने शब्दों में दें ।
4. पाठ से लहना और सूबेदारनी के संवादों को एकत्र करें ।
5. "कल, देखते नहीं यह रेशम से कढ़ा हुआ सालू ।" यह सुनते ही लहना की क्या प्रतिक्रिया हुई ?
6. "जाड़ा क्या है, मौत है और निमोनिया से मरनेवालों को मुरब्बे नहीं मिला करते", वजीरासिंह के इस कथन का क्या आशय है ?
7. 'कहती है, तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आए हो ।' वजीरा के इस कथन में किसकी ओर संकेत है ?
8. लहना के गाँव में आया तुर्की मौलवी क्या कहता था ?
9. 'लहना सिंह का दायित्व बोध और उसकी बुद्धि दोनों ही स्पृहणीय हैं ।' इस कथन की पुष्टि करें ।
10. प्रसंग एवं अभिप्राय बताएँ –
    'मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ हो जाती है । जन्म भर की घटनाएँ एक-एक करके सामने आती हैं । सारे दृश्यों के रंग साफ होते हैं; समय की धुंध बिलकुल उनपर से हट जाती है ।'
11. मर्म स्पष्ट करें –

(क) 'अब के हाड़ में यह आम खूब फलेगा । चाचा भतीजा दोनों यहीं बैठकर आम खाना । जितना बड़ा भतीजा है उतना ही यह आम है । जिस महीने उसका जन्म हुआ था, उसी महीने में मैंने इसे लगाया था ।'

(ख) 'और अब घर जाओ तो कह देना कि मुझे जो उसने कहा था वह मैंने कर दिया ।'

12. कहानी का शीर्षक 'उसने कहा था' क्या सबसे सटीक शीर्षक है ? अगर हाँ तो क्यों, या आप इसके लिए कोई दूसरा शीर्षक सुझाना चाहेंगे, अपना पक्ष रखें ।
13. 'उसने कहा था' कहानी का केंद्रीय भाव क्या है ? वर्णन करें ।

पाठ के आस-पास

1. 'उसने कहा था' कहानी आचार्य महावीर प्र० द्विवेदी द्वारा संपादित 'सरस्वती' पत्रिका में जून 1915 में प्रकाशित हुई थी । गुलेरी जी की इस कहानी की पृष्ठभूमि प्रथम विश्वयुद्ध (1914-1918) की है । इस युद्ध में एक ओर जर्मनी, ऑस्ट्रिया, हंगरी, बुल्गारिया और तुर्की थे । दूसरी ओर ब्रिटेन, फ्राँस, रूस, जापान और इटली । प्रत्यक्षतः, भारत इस युद्ध में कहीं नहीं था, फिर भी भारतीय सिपाही इस युद्ध में लड़े और अपनी जान दी । इस दृष्टि से विचार करते हुए भारतीय सिपाहियों की जीवन-स्थितियों का मूल्यांकन आप किस तरह करेंगे ।
2. गुलेरी जी की दूसरी कहानियों जैसे 'सुखमय जीवन', 'बुद्धू का काँटा' को भी उपलब्ध कर पढ़ें ।
3. गुलेरी जी हिंदी के आरंभिक कहानीकारों में हैं । उनके समकालीन हिंदी के आरंभिक कथाकारों की सूची बनाएँ और उनकी प्रमुख कहानियों के नाम भी लिखें ।
4. इस कहानी में 'फ्लैश बैक' पद्धति का प्रयोग हुआ है, आप कुछ ऐसी फिल्मों के नाम बताइए जिसमें इस तकनीक का प्रयोग हुआ हो ।
5. इस कहानी का नाट्य रूपांतरण अपने विद्यालय में प्रस्तुत करें ।

भाषा की बात

1. निम्नलिखित शब्दों से विशेषण बनाएँ और उनका वाक्य में प्रयोग करें –
   जल, धर्म, नमक, विलायत, फौज, किताब
2. दिए गए शब्दों के समानार्थी शब्द लिखें –
   मुर्दा, लहू, घाव, झूठ, चकमा, चिट्ठी, घर, राजा, रचना
3. रचना के आधार पर इन वाक्यों की प्रकृति बताएँ –
   (क) राम राम, यह भी कोई लड़ाई है ।
   (ख) परसों 'रिलीफ' आ जाएगी और फिर सात दिन की छुट्टी ।
   (ग) कहती है, तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आए हो ।
   (घ) इस पर लड़की कुछ आँखें चढ़ाकर 'धत्' कहकर दौड़ गई और लड़का मुँह देखता रह गया ।
   (ङ) हाँ, देश क्या है, स्वर्ग है !
   (च) मैं तो बुलेल की खड्ड के किनारे मरूँगा ।
4. उत्पत्ति की दृष्टि से इन शब्दों की प्रकृति बताएँ –
   आवाज, कयामत, आँसू, दही, बिजली, क्षयी, बेईमान, सोते, बावलियों, खाद, सिगड़ी, बादल ।

शब्द निधि :

लड्ढीवाले	:	गाड़ीवाले
कुड़माई	:	सगाई
सालू	:	दुपट्टा
छाबड़ीवाले	:	खोमचेवाले

गनीम	:	दुश्मन
गैबी	:	आसमानी, दैवी
जलजला	:	भूकंप
उदमी	:	उद्यमी
विदूषक	:	जोकर
पाधा	:	पुरोहित
लाड़ी होराँ	:	स्त्री के लिए आदरसूचक शब्द
माँदे	:	ठंढे
मुरब्बे	:	नहरों के पास की जमीन
खानसामा	:	रसोइया
सौहरा	:	एक प्रकार की गाली
खोते	:	गधा
क्षयी	:	क्षीण होता
दंतवीणोपदेशाचार्य	:	दाँतों से वीणा बजाने का उपदेश देने वाली
तीमियों	:	स्त्रियों
ओबरी	:	घर के अंदर की कोठरी
पट्ट	:	जाँघ
हाड़	:	आषाढ़
सिगड़ी	:	अँगीठी, बोरसी